# किसान कर्जमाफी : समाजशास्त्रीय विश्लेषण

**डॉ0 अनीता बाजपेयी**

*एसोसिएट प्रोफेसर–समाजशास्त्र विभाग,*

*श्री जय नरायण पी0जी0 कालेज,*

*लखनऊ (उ0प्र0)*

भूमि शक्ति का परिचायक होती है, किसान की भूमि ही उसकी शक्ति है और खेती ही उसकी आजीविका है। विगत कई वर्षों से ऐसा हो रहा है कि किसान प्राकृतिक आपदा का शिकार बनता चला जा रहा है। रबी की फसल कोहरे और ओले की भेंट चढ़ जा रही है तो खरीफ की फसल सूखे की मार से चौपट हो जा रही है। प्राकृतिक आपदा ने किसान की कमर तोड़ कर रख दी है। भारत के ज्यादातर किसान रबी और खरीफ की फसल ही बोते हैं क्योंकि जायद की खेती का चलन अभी भी भारत में अधिक नहीं है इसलिए वाणिज्यिक खेती नहीं हो पाती। भारत में लगभग 68–70 प्रतिशत लोग खेती–किसानी या उससे जुड़े व्यवसाय में लगे हैं, यही उनके आमदनी का जरिया है। खेती करने के लिए किसान छोटे–छोटे ऋण बैंकों के माध्यम से लेता है, जो पहले साहूकारों से लिया जाता था। फसल का उचित मूल्य न मिल पाने के कारण ऋण की अदायगी समय से हो नहीं पाती जिस पर ब्याज चढ़ता जाता है और किसान कर्ज के बोझ तले दबता चला जाता है; यहीं से किसान कर्ज माफी की भूमि तैयार होती है। किसान कर्जमाफी का तात्पर्य है बैंक से लिया गया कुछ निश्चित ऋण कुछ निश्चित अवधि तक का सरकार माफ कर देती है। कई बार इसके मायने राजनीतिक भी होते हैं अर्थात् सरकार इस तरह की योजनाएं चुनाव के वक्त ही ले आती है ताकि किसान को वह वोट बैंक में तब्दील कर सके। भारत की राजनीति भी किसान केन्द्रित हो गयी है। चुनावों में किसानों के मुद्दे हावी होते जा रहे हैं – उ0प्र0 में प्रधानमंत्री जी ने विधानसभा चुनाव से पहले किसानों की कर्जमाफी, फसल बीमा योजना, फसल की सरकारी मूल्य पर खरीद, यूरिया की नीमकोटिंग, मृदा स्वास्थ्य कार्ड और किसानों से सम्बंधित अनेक समस्याओं को चुनाव का मुद्दा बनाया था। इसे अगर हम ग्रामीण विकास की दृष्टि से देखते हैं तो यह निश्चित रूप से सरकार का एक सराहनीय कदम है। इस कार्यक्रम से किसान का आत्मबल, मनोबल बढ़ता है, बशर्ते कि वह कदम ईमानदारी से उठाया गया हो। यहाँ पर ईमानदारी दोनों पक्षों में दिखायी पड़नी चाहिए – (1) किसान (2) सरकार

किसान अगर वास्तव में कृषि कार्यों के लिए ही ऋण लिया है और उसे वापस करने की उसकी मंशा है लेकिन चूँकि प्राकृतिक आपदा के कारण फसल नष्ट हो गयी है और उसके जीवन यापन के लिए संकट खड़ा हो गया है। ऐसी स्थिति में, किसान का कर्ज माफ होता है तो वह सरकार द्वारा उठाया गया कदम सराहनीय है और लोक कल्याणकारी राज्य की भावना

से निहित है। इसी तरह सरकार को भी ईमानदारी बरतनी चाहिए। कर्जमाफी में वोट बैंक की चिन्ता छोड़कर, जाति, धर्म, सम्प्रदाय आदि से ऊपर उठकर केवल किसान हित में फैसला करना चाहिए। यह कदम किसान का मनोबल बढ़ाने का होना चाहिए, न कि उसे दया का पात्र बनाने का ।

किसानों के लिए भूमि का स्वामित्व बहुत ही महत्व रखता है। यह ग्रामीण शक्ति संरचना का परिचायक होता है लेकिन शक्ति के नये स्रोत के उदय के साथ, जिसमें शिक्षा तक पहुँच शहरी नौकरियों और शहरी उच्च वर्ग में सम्बंध शामिल है, की तुलना में उसका महत्व अब कम हो गया है। आजीविका के स्रोत के रूप में कृषि में खासकर युवा पीढ़ी की रुचि कम होने के साथ–साथ ग्रामीण उच्च वर्ग कृषि में अपनी आय को लेकर शहरी इलाकों में चला जाता है और अक्सर अपनी जमीन को छोटे किसानों को किराये पर दे देता है। इससे गैर कृषि क्षेत्र में जाने की संभावना भी होती है। कई धनी किसान चाहते हैं कि उनका एक बेटा शहर में काम करे और दूसरा बेटा खेत पर काम जारी रखे।

भारतीय किसानों को लेकर प्रधानमंत्री चिन्तित अवश्य है। उनका कहना है कि 2020 तक वे किसानों की आय दोगुनी कर देंगे लेकिन क्या इससे उनकी आयु दोगुनी हो जायेगी। आज हमारी घरेलू और वैश्विक दोनों राजनीति के केन्द्र में किसान आ गया है लेकिन उसका वास्तविक लाभ मूल प से किसानी करने वाले को कैसे मिले यही सोचने का विषय है।

## खेती के सन्दर्भ में लिंगीय नजरिया

आजकल खेती के कार्य को लेकर स्त्री–पुरुष के सम्बंधों में बदलाव आ रहा है। अधिक से अधिक पुरुषों के गाँवों से बाहर गैर कृषि क्षेत्रों में चले जाने से कृषि का नारीकरण हो रहा है। हालांकि अब भी पुरुषों की तुलना में महिलाओं की संख्या काफी कम है। फिर भी सन् 2009–10 में पुरुषों की 63 प्रतिशत संख्या के मुकाबले कृषि में लगी ग्रामीण महिलाओं की संख्या 79 प्रतिशत थी (एन.एस.एस.ओ. 2011)। 1980 के दशक से कृषि क्षेत्र में महिलाओं की तुलना में पुरुषों की भागीदारी कम हुई है। क्योंकि वे खेतों को अपनी पत्नी या माँ–बाप के सहारे छोड़कर काम की तलाश में बड़े शहरों की ओर चले जाते हैं। चाहे यह कम समय के लिए ही क्यों न हो। इस दौरान महिलाएं कृषि पर निर्भर रहती हैं इसके वाबजूद लिखा पढ़ी में आज भी महिलाओं के नाम रजिस्ट्री या बैनामा की संख्या लगभग नगण्य है। पुरुषों द्वारा खेती को अपनी पत्नियों की देख–रेख में छोड़कर चले जाने से महिलाओं की स्थिति में बदलाव नजर आने लगा है। कुछ क्षेत्रों में महिलाओं के सामाजिक दर्जे में धीरे–धीरे बदलाव आ रहा है। अब वे निर्णय लेने की अधिक शक्ति रखती हैं। यद्यपि कई बार मोबाइल फोन पर पतियों की राय लेती हैं। यहाँ पर बिहार के रूढ़िवादी गाँवों का अध्ययन संकेत करते हैं कि पुरुषों के बाहर चले जाने से भले ही महिलाओं पर काम का बोझ बढ़ गया हो, लेकिन अब उनकी भूमिका स्पष्ट तौर पर दिखाई देती है। जैसे बच्चों को डॉक्टर के पास ले जाना, गाँव से बाहर जाकर बाजार से सामान ले आना, बूढ़े माँ–बाप से बातचीत करना, रिश्तेदारी निभाना (रॉजर्स एण्ड रांजर्स 2011) वे पैसे

के मामले में अधिक उत्तरदायी होती है और अपनी आय बढ़ाने के लिए मजदूरी भी करती हैं। जो पहले सम्भव नहीं था। महिला एवं पुरुषों की मजबूरी का घटता अन्तर भी इसमें महत्वपूर्ण है।

## व्यवस्थित खेती से कर्जमाफी घटेगी

कुछ लोग व्यवस्थित तरीके से खेती नहीं करते हैं। बैंक से लोन लेने के बाद उस पैसे को दूसरे काम में खर्च कर देते हैं। सरकार की ओर से कृषि लोन के साथ ही फसल बीमा की भी व्यवस्था की गयी है। यदि किसी कारण से फसल खराब हो जाती है तो बीमे के जरिये उस ऋण की भरपाई होती है। इसके अलावा ओलावृष्टि अथवा अन्य प्राकृतिक आपदा से निपटने के लिए भी सरकार राहत देती रहती है। यदि किसान लोन लेकर खेती करता है और व्यवस्थित तरीके से पैसा खर्च करता है तो ऋण अदायगी आसानी से की जा सकती है।

किसानों के लिए खेती सम्बंधी संसाधन, आधारभूत जरूरत होते हैं। किसानों को आत्म–निर्भर बनाने के लिए सरकार की ओर से कई योजनायें चलाई जा रही हैं। बुआई के लिए फसली ऋण, फसल बीमा आदि का इन्तजाम है। ऐसे में किसान परम्परागत खेती के साथ–साथ व्यवसायिक खेती भी कर सकता है। पशुपालन, कुक्कुट पालन, मछली पालन आदि। यहाँ ध्यान देने की आवश्यक बात यह है कि जिस काम के लिए बैंक से ऋण ले उसे उसी काम में खर्च करें और यह भी ध्यान रखें कि समय पर कर्ज लौटाना भी जरूरी है, अन्यथा यह ऋण जी का जंजाल बन सकता है। यदि किसान नियमानुसार कार्य करे तो निश्चित रूप से किसान आत्म निर्भर बन सकते हैं और सरकार से कर्जमाफी की आस लगाना भी छोड़ देंगे। कर्जमाफी से बेहतर होगा कि गाँव को बुनियादी सुविधाएं दी जायं, जैसे – (1) सड़क (2) साफ पानी (3) चिकित्सकों की व्यवस्था अस्पतालों में (4) बिजली (5) स्कूल – सरकारी एवं गैर सरकारी दोनों (6) बाजार का निर्माण (7) संचार के साधन (8) पर्यटन के अच्छे साधन (9) आवागमन का साधन (Transportation) (10) बड़े–बड़े शॉपिंग माल (11) बड़े–बड़े सरकारी ऑफिस (12) सरकारी योजनाओं के निगरानी सेल गाँव में ही बने (13) बड़ी–बड़ी सरकारी कृषि मण्डी (14) बड़े–बड़े कोल्ड स्टोरेज एवं स्लाटर हाउस इत्यादि। यदि सरकार उपरोक्त बातों पर गम्भीरता से विचार करके और बुनियादी सुविधाओं की व्यवस्था सुनिश्चित करें तो शायद उसे कर्जमाफी करके किसानों को दीन–हीन बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

मनरेगा जैसी योजनाओं से किसानों को और जो भूमिहीन किसान है उनको एक बड़ा फायदा मिला है। उसमें मजदूरी निर्धारित कर दी गयी है। पहले खेतों पर काम करने वाले मजदूरों की मजदूरी निर्धारित नहीं थी। अब यह समस्या खत्म हो गयी है। मजदूर खेत में काम करने को लेकर बाध्य नहीं है। पहले कम पैसे में काम करना उनकी विवशता थी। वास्तव में मनरेगा बहुत महत्वपूर्ण योजना है। इसके लागू होने से बेरोजगारी कम हुई है। गाँव में जिन लोगों के पास बहुत कम खेते है वे खेती भी कर रहे हैं और मनरेगा का काम भी। ऐसे में उन्हें काम की तलाश में इधर–उधर भटकना नहीं पड़ता।

## वाणिज्य खेती की प्रवृत्तियाँ

चूँकि भारत के बुआई क्षेत्र का 55 से 65 प्रतिशत हिस्सा या तो शुष्क क्षेत्र में है, का वर्षा पोषित है इसलिए ऐसे क्षेत्रों के लिए उपयुक्त वाणिज्यिक खेती के नये मॉडल विकसित किये जाने चाहिए। मोटे आनाज (ज्वार, बाजरा, रागी) और शुष्क भूमि पर उगने वाली अन्य फसलों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ताकि भोजन, पोषण, जल–सुरक्षा, सामुदायिक, आत्म–निर्भरता और जैव–विविध एवं पारिस्थितिकी रूप से उचित खेती सुनिश्चित की जा सके।

कृषि से व्यवसायिक एवं उच्च मूल्य–वर्धित फसलों की खेती की ओर जाना है। जिसमें बागवानी भी शामिल है। फल, सब्जियों, मसालों और फूलों की खेती तथा सोयाबीन जैसी गैर पारम्परिक फसलें भी उगायी जा रही हैं। इससे किसानों में अधिक समृद्धि आयेगी।

सीमान्त एवं छोटे किसानों के लिए ऋण लेना फसल खराब होने की स्थिति में जोखिम भरा हो सकता है। जिनके पास निवेश के लिए अधिशेष नहीं होता और जिनकी पहुँच संस्थागत ऋण तक नहीं होती। कई बार उनके पास ऋणाधार या भूमि का स्पष्ट स्वामित्व नहीं होता। उन्हें साहूकारों पर निर्भर रहना पड़ता है, इन किसानों को न केवल अधिक ब्याज देना पड़ता है, बल्कि उनसे दमनकारी तरीकों से ऋण उगाही की जाती है।

फसलों के लाभकारी मूल्य मिलने की उम्मीद के बिना अगली फसल की बुआई के लिए ऋण तो उठाना ही पड़ता है इससे कर्ज की समस्या बनी रहती है। किसान फल के उचित मूल्य से वर्षों से वंचित है।

किसानों के संकट को कर्जमाफी से अलग करके भी देखा जाना चाहिए। कोई दीर्घकालीन योजना बनानी चाहिए जिससे किसानों को उनका वाजिब हक मिल सके। हम पंजाब का उदाहरण ले सकते हैं। वहाँ का किसान प्रगतिशील है, सिंचित भूमि है, इसके बावजूद आत्महत्या का कोई कारण नजर नहीं आता है लेकिन आत्म–हत्याएं हो रही हैं। इसकी एक मजबूत वज़ह है फसल का न्यूनतम समर्थन मूल्य न मिल पाना।

## क्या कर्जमाफी किसानों की समस्या का कोई हल है ?

विगत कुछ दशकों से कर्जमाफी राजनीतिज्ञों के लिए सबसे सरल रास्ता हो गया है। इससे किसानों के एक बड़े तबके को वोट बैंक में तब्दील किया जाता है। करीब 6 लाख गाँवों और साढ़े पाँच करोड़ किसानों वाले देश में अब न तो कोई बड़ा किसान नेता है, और न ही किसान राजनीति न आन्दोलन है। किसानों की राजनीति करने की क्षमता जिनमें है वे सब शहरी बनके रह गये हैं। जनगणना 2011 के आँकड़े बताते हैं कि पिछले एक दशक में खेतिहरों की संख्या में काफी कमी आयी है। एक अध्ययन के अनुसार लगभग 62 प्रतिशत किसान शहरी नौकरी के लिए किसानी छोड़ने के लिए तैयार है। पंजाब में विगत कुछ महीनों में 21 किसानों ने खुदकुशी की है जबकि पंजाब सरकार ने छोटे किसानों के 2 लाख तक के कर्ज माफ कर दिये हैं, यही स्थिति महाराष्ट्र की है। वहाँ पर भी कर्जमाफी के बाद भी आत्म–हत्या की दरों में तेजी आयी है। यहाँ भी लगभग 3 माह के अन्तर्गत लगभग 42 किसानों ने आत्म–हत्या की है। आदर्श रूप से देखा जाय तो कर्जमाफी की घोषणा से

किसानों की आत्महत्या दर में कमी आनी चाहिए थी लेकिन ऐसा नहीं हुआ। इससे लगता है कि सरकार कृषि के संकट को समझ नहीं पा रही है या कर्जमाफी मौजूदा कृषि संकट को हल करने का सही तरीका नहीं है। जिस तरह से कर्जमाफी की योजना तैयार की जाती है और उसे क्रियान्वित किया जाता है उससे छोटे किसानों को लाभ नहीं मिल पा रहा है। क्योंकि वे बटाई पर खेती करते हैं। भूमि उनके नाम नहीं होती है, वे एक प्रकार से खेतिहर मजदूर होते हैं। इसलिए उनको न तो बीमा कम्पनियों का लाभ और न ही कर्जमाफी का लाभ उन्हें मिल पाता है। ऐसे किसान आत्म–हत्या करने के लिए बाध्य हो जाते हैं। बटाई पर काम करने वाले किसानों की संख्या ज्यादा है। कुछ राज्यों में उनके हितों की रक्षा के लिए टेनेंसी–कानून बनाया गया है, लेकिन अनपढ़ किसान इसको समझ ही नहीं पाता औ जमींदार के एहसान से इतना दबा होता है कि वह उसके खिलाफ आवाज नहीं उठा पाता।

आज आवश्यकता इस बात की है कि सरकार वास्तविक किसान और छद्म रूपी किसान की पहचान करे और उनके अनुरूप उनकी समस्याओं का निराकरण करें। कोशिश यही होनी चाहिए कि सरकारी योजनाओं का लाभ खेतहर मजदूरों को मिले न कि बड़े–बड़े काश्तकारों को जो कि बटाई पर खेती को चढ़ाये हुए हैं। किसानों को यह मंशा साफ करनी होगी कि जिस मद के लिए ऋण ले रहे हैं उसी मद में उसका प्रयोग करें तथा ऋण की अदायगी समय पर करने की नीयत रखें तभी ग्रामीण विकास का सपना साकार होगा और भारत का किसान उन्नतशील होगा।

## सन्दर्भ


- समाचार पत्र।
- सरकार के घोषणा–पत्र।
- ग्रामीण समाजशास्त्र – डॉ0 वी0एन0 सिंह।
- भारत ग्रामीण विकास रिपोर्ट, 2012–13 ।
- कुरुक्षेत्र मैग्ज़ीन, नवम्बर–2013 ।


*Copyright © 2017, Dr. Anita Bajpayee. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.*